मन्नू भण्डारी के उपन्यासों में व्यक्ति और समाज

डॉ0 गुड्डी
प्रवक्ता हिन्दी विभाग,
गढ़वाल विश्व विद्यालय टिहरी परिसर(उत्तरांचल राज्य)

स्वतन्त्रतापरवर्ती महिला उपन्यासकारों में मन्नू भण्डारी का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। बदलती परिस्थितियों एवं परिवेश के कारण व्यक्ति का समाज में सहजतापूर्ण जीवन जीना कठिन हो गया है, ऐसे ही कई बिन्दुओं पर मन्नू जी की लेखनी निरन्तर चली आ रही है, लेखिका का कथा–साहित्य आधुनिक सामाजिक विसंगतियों और उस समाज में जी रहे व्यक्ति के अन्तर्मन की अनेक उलझनों का दस्तावेज0 है। मन्नू भण्डारी का व्यक्ति पात्र आधुनिकता के मद में पारिवारिक मर्यादाओं का भी उल्लंघन कर डालता है। सभ्य समाज में उच्चशिक्षा प्राप्त नारी का जीवन महत्तवाकांक्षा का शिकार है, जो प्रतिशोधात्मकता की स्थिति का बखूबी प्रयोग करती है तब चाहे इसका शिकार उसे खुद ही क्यों न बनना पड़े।

मन्नू भण्डारी जैसी जागरूक कलाकार का साहित्य समाज की सापेक्षता का संवाहक है, उनके उपन्यासों में समसामयिक समाज बोलता है, वह न तो उपदेशक बनकर आई हैं और न उन्होंने आदर्शों की आड़ से समस्याओं का हल खोजने का प्रयास किया है। मन्नू जी ने समाज की वास्तविक स्थिति से अवगत कराते हुए भलाई–बुराई, पाप–पुण्य, सुख–दुख का चित्रण कर मानव मन की गहराइयों का चाहकर सामाजिक समस्याओं पर अपनें उपन्यासों के कथानकों का निर्माण किया है। प्रायः ऐसा स्वतन्त्रतापरवर्ती महिला उपन्यासकारों में मन्नू भण्डारी का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। बदलती परिस्थितियों एवं परिवेश के कारण व्यक्ति का समाज में सहजतापूर्ण जीवन जीना कठिन हो गया है, ऐसे ही कई बिन्दुओं पर मन्नू जी की लेखनी निरन्तर चली आ रही है, लेखिका का कथा–साहित्य आधुनिक सामाजिक विसंगतियों और उस समाज में जी रहे व्यक्ति के अन्तर्मन की अनेक उलझनों का दस्तावेज है। मन्नू भण्डारी का व्यक्ति पात्र आधुनिकता के मद में पारिवारिक मर्यादाओं का भी उल्लंघन कर डालता है। सभ्य समाज में उच्चशिक्षा प्राप्त नारी का जीवन महत्वाकांक्षा का शिकार है, जो प्रतिशोधात्मकता की स्थिति का बखूबी प्रयोग करती है तब चाहे इसका शिकार उसे खुद ही क्यों न बनना पड़े।

प्रायः ऐसा देखा गया है कि कभी रचनाओं में मानव मन की पहचान के नाम पर सामाजिक परिस्थितियों की उपेक्षा की जाती है, यह स्थिति अतिवादिता की परिचायक है। विकसित लब्धबोध रचनाकार व्यक्ति की अंतरंगता और सामाजिक परिवेश की वास्तविकता का बड़ा ही सानुपातिक प्रयोग करता है अतः कोई भी कृति एकान्त से एकान्त परिस्थिति में भी सामाजिक संदर्भ से बिल्कुल निर्पेक्ष नहीं हो सकती है। मन्नू भण्डारी के उपन्यासों में समाज के स्वरूप को काफी हद तक अभिव्यक्ति दी गई है उन्होंने सजगता और तटस्थता के साथ समाज का स्वरूप खींचा है।

मन्नू भण्डारी के उपन्यासों में एक ओर नितान्त मनोविज्ञान की भित्ति पर खड़े व्यक्तियों के संत्रास, घुटन, स्वानुभूति, संवेनदना, अवसाद व मनोभावों पर आधारित चित्रण लेखिका के उपन्यास का मुख्य हिस्सा रहा है तो दूसरी ओर वर्तमान समाज की उस विद्रूपतामूलक राजनीति में मंजे भ्रष्ट राजनीतिज्ञों के चित्रण का खुलासा भी उपन्यास का महत्वपूर्ण पक्ष है। राजनीति का ऐसा चित्रण मन्नू भण्डारी के 'महाभोज' नामक उपन्यास में हमारे सामने प्रस्तुत किया गया है जिसमें व्यक़्ति का स्वार्थ महत्वपूर्ण और समाज व राष्ट्र के मूल्य गौंण हो जाते हैं। गाँधीवादियों ने ही गाँधी को बदनाम किया है, इस घिनौने रूप

को दर्शाने वाला यह उपन्यास झूठे आदर्शों में जी रहे दा साहब के आडम्बरपूर्ण व्यक्तित्व को उभारने में अंत तक सफल रहा है। पद और धन के आने से व्यक्ति में कितनी ही विकृतियों का जन्म हो जाता है इस बात को यह उपन्यास बखूबी दर्शाता है।

'आपका बंटी' नामक उपन्यास को व्यक्तिवादी मनोवैज्ञानिक कोटि का उपन्यास कहा जा सकता है। आधुनिकता के मद में व्यक्ति का जीवन सब प्रकार के संयम व मर्यादाओं को नकार रहा है। स्पष्ट है कि जैनेन्द्र की ही भाँति यहाँ लेखिका ने जो महत्व व्यक्ति को दिया है वह समाज को नहीं दिया, यहाँ की शकुन समाज के नियमों की विद्रोही है। उसका अहं इतना सबल है कि वह समाज के नियमों व बंधनों को तोड़ ड़ालती है। पति–पत्नी के टकराव के बीच एक अबोध 9–10 वर्षीय बच्चे की मनः स्थिति व असुरक्षा की भावना बनी रहती है। 'आपका बंटी' नामक उपन्यास के बंटी में मम्मी पापा के बीच के तनाव से उत्पन्न परिवेश का बालमन में सिमटना, उलझन में पड़ना, कभी बाल स्वभाव को छोड़कर बहुत गम्भीर बन जाने की अस्वभाविकता बनी रहती है। मन्नू जी के इस बालपात्र में कभी चिड़चिड़ापन तो कभी झुंझलाहट, इन सभी अन्तर्मन की परतों को लेखिका ने इस कदर उधाड़कर रख दिया कि रचनाधर्मिता की विश्वसनीयता पर प्रश्न भी लग जाता है। एक छोटा सा बच्चा जीवन और परिवेश की जटिलताओं के प्रति इतना सचेत हो सकता है कि शुरू से लेकर अंत तक सारी सहानुभूति बटोर जाता है, पाठक की आँखों में आँसू आ जाते हैं। व्यक्ति चरित्र की गहराई तक जाने में लेखिका को पर्याप्त सफलता मिली है, यदि बंटी अबोध बच्चा न होकर किशोर वयः (17–18 वर्ष का) दिखाया जाता तो शायद माँ के इस तरह के बर्ताव को देखकर उसके जीवन की परिणति विद्रोही, चोर, बदमाश या अतिसौम्य इन्सान के रूप में भी हो सकती थी और उपन्यास आगे बढ़ता, परन्तु लेखिका ने बड़ी ही कुशलता से उस बच्चे के व्यक्तिमन को इस उपन्यास का केन्द्र बिन्दु बनाया, जिसके लिए अच्छाई व बुराई में भेद करना मुश्किल है। वह बंटी जो घर से स्वयं तो बहुत दूर नहीं भाग पाता, पर उसके मन के विपरीत स्वयं माँ–बाप के बीच का तनाव हॉस्टिल तक पहुँचाने को मजबूर कर देता है।

लेखिका ने बंटी जो उपन्यास का केन्द्रीय पात्र है उसकी सोच और मनः स्थिति में अनेक ज्वलन्त प्रश्नों को खड़ा कर दिया है, जैसे व्यक्ति प्रसंग में स्त्री व पुरूष के सम्बन्ध, उन सम्बन्धों में टकराव, संघर्ष और नकारात्मक सोच आडम्बर व प्रतिशोध के आ जाने से पारिवारिक ढाँचे व परिवार कैसे टूट जाते हैं? नौकरी–पेशा वाली स्त्री की महत्वाकांक्षाएं उसे कहाँ से कहाँ तक ढ़केलती हैं परन्तु जन्मना नारी होने के कारण नारी सुलभ दुर्बलता से भी ग्रस्त है। पति को त्यागने पर नारी कैसे बच्चे के ऊपर अवलम्बित व आत्मनिर्भर हो जाती है कि उसको हॉस्टिल भेजने के नाम पर आशंकित हो उठती है। कभी–कभी नारी मन इतना विद्रोही हो जाता है कि अपने प्रति हुए अनाचार का प्रतिशोध दूसरे पुरूष का आश्रय लेकर व्यक्त करती है, लेखिका को भी नारी का यही रूप स्वीकार्य है। यहाँ की नायिका शकुन का मनोविज्ञान कुछ इस प्रकार है– "नहीं अजय से कुछ न पा सकने का दंश नहीं बल्कि दंश शायद इस बात का है कि किसी और ने अजय से वह सब क्यों पाया जो सब उसको प्राप्य था।"[1] लेखिका ने नारी मन के इस तीसरे पक्ष को प्रतिशोधात्मक स्थिति में रखा है, यहां पर नारी पति महत्ता को गौंण मानने लगती है और महत्वाकांक्षा के उन्माद में कुछ नया कर दिखाने की ललक रखती है। नायिका शकुन को लेखिका ने इस प्रकार दिखया है– "उसे साफ लगता था कि जोशी या किसी का भी चुनाव उसे करना है तो जैसे अपने लिए नहीं करना है अजय को दिखाने के लिए करना है, मीरा की तुलना में करना है।"[2]

भारतीय परिवार भारतीय समाज में आकार पाते हैं इस दृष्टि से मन्नू भण्डारी का 'आपका बंटी' नामक उपन्यास की बाल–समस्या सिर्फ उपन्यास के प्रमुख पात्र बंटी की ही नहीं है, बल्कि पूरे समाज की है, बंटी के लिए एक घर में उसकी मम्मी है तो उसके पापा नहीं, दूसरे घर में उसके पापा हैं तो मम्मी नहीं है। इसलिए उसकी नियति वहीं रहने में है जहां दोनों नहीं हैं। शायद वह खुद भी नहीं है। बंटी जिस समस्या को लेकर लेखिका की लेखिनी में उभरा है वह

समाज के किसी एक परिवार की समस्या नहीं, अनेकों समाजों के परिवारों से जुड़ी समस्या है। समाज पति–पत्नी के आपसी सम्बन्धों से अप्रभावित कभी नहीं रह सकता है, बंटी के माध्यम से लेखिका ने समाज की ऐसी ज्वलन्त समस्या को पूर्ण सच्चाई के साथ अभिव्यक्ति किया है जिसका निदान दिखाई नहीं देता। इस उपन्यास में समाज के सामने तलाकशुदा दम्पत्ति की संतान एक प्रश्न चिन्ह बनकर खड़ी हो गई, इस उपन्यास को हिन्दी क्षेत्र की एक विशिष्ट उपलब्धि केवल सामाजिक और पारिवारिक समस्या के संदर्भों में नवीन सामाजिक–चेतना के दिग्दर्शन के कारण स्वीकार किया गया है। तलाक और पुनर्विवाह की विषय परिस्थिति में एक नन्हे बच्चे की मन:स्थिति का ऐसा यथार्थ तथा मार्मिक अंकन किया गया है कि जिसे पढ़कर समाज में बाल–बच्चों वाले दम्पत्ति तलाक देने और फिर पुनर्विवाह करने के सम्बन्ध में सो बार सोचेंगे और फिर शायद ही ऐसा करने का साहस करेंगे। उपन्यास की कथा समाज को किस कदर प्रभावित करने की क्षमता रखती है यह तो 'आपका बंटी' के महत्वपूर्ण और मार्मिक स्थल स्पष्ट कर देते हैं। एक ओर जहां लेखिका ने परिवार का बहुत बड़ा योगदान माना है और परिवार का दृढ़ होना, समाज व बच्चों के जीवन की सुन्दर पाठशाला माना है, वहीं दूसरी ओर उनके दूसरे उपन्यास 'महाभोज' में आधुनिक राजनीतिक स्थिति की सारी कलई खोलकर रख दी गई है। सदियों से चली आ रही जीर्ण–शीर्ण सामाजिक रूढ़ियों का प्रतिकार कर मानवीय सम्बन्धें की नवीन व्यवस्था प्रस्तुत करना ही सामाजिक चेतना का भास्वर रूप है, इसी दृष्टि से मन्नूभण्डारी ने 'महाभोज' नामक उपन्यास के प्राक्कथन में सामाजिक चेतना को प्रखर अभिव्यक्ति दी है– "दुर्निवार सम्मोहन भरी उस खतरनाक लपकती अग्निलीक के लिए जो विस्सू और विन्दा तक ही नहीं रूकी रहती।"[3]

मन्नू भण्डारी का 'महाभोज' नामक उपन्यास समाज में घिनौनी राजनीति एवं गन्दे लोगों का दस्तावेज है, जिन्होंने गाँधी व नेहरू के आदर्श की आड़ में अपने घिनौने कर्मों को कार्यरूप दिया है। 'महाभोज' की घिनौनी राजनीति में मनुष्य बलि का बकरा बन गया है, राजनीति का यही घिनौना रूप समाज में अनेक प्रकार के अत्याचार व पाखण्डों को जन्म देता है। मन्नूभण्डारी का सामाजिक सरोकार उनके आत्मकथ्य से भी प्रकट होता है और समाज के दुख–दर्द साहित्यकार के अपने से लगते हैं, तब वह अपनी व्यक्तिगत असुविधाओं की परवाह न करता हुआ उस दिशा में प्रयासरत होता है, जिधर से परिवर्तन की नई किरण के आने की सम्भावना होती है। साहित्यकार अपनी समसामयिक परिस्थितियों से असंपृक्त या निर्पेक्ष नहीं रह सकता है। मन्नूभण्डारी के ही शब्दों में– "अपने व्यक्तिगत दुख–दर्द, अन्तर्द्वन्द्व या आन्तरिक नाटक को देखना बहुत महत्वपूर्ण सुखद और आश्वास्तिदायक तो मुझे भी लगता है, मगर जब घर में आग लगी हो तो सिर्फ अपने अन्तर्जगत में बने रहना या उसी का प्रकाशन करना क्या खुद ही अप्रासंगिक, हास्यास्पद और किसी हद तक अश्लील नहीं लगने लगता? सम्भवत: इस उपन्यास की रचना के पीछे यही प्रश्न रहा हो।"[4]

'महाभोज' नामक उपन्यास में दा साहब का व्यक्तित्व आज के महिमामण्डित उन राजनीतिज्ञों सा है जो अपने आपको राजनेता समझते हैं, अपनी संस्कृति पर गर्व करते हैं और अपना सारा ध्यान केन्द्रित करते हैं सत्ता की पकड़ पर। राजनीति में गिरगिट की तरह रंग बदलने वाला सुकुलवा है जो भाड़े के लोगों की भीड़ इक्ट्ठी करना, तालियाँ बजवाना तथा अपनी चिकनी चुपड़ी बातों से लागों को अपने पक्ष में करने की कला में वह माहिर है– "सुकुल बाबू ने आवाज और अदा बदलकर बड़ी नाटकीय मुद्रा में कहा– आप लोग मुझसे नाराज हुए – हक था आपका, पर बदले में मैं भी नाराजगी दिखाता तो गुनाह होता मेरा।"[5] इस प्रकार पूरे उपन्यास में आज की राजनीति की विद्रूपताएँ, उसकी सडांध, कुत्साएं अपने पूरे परिवेश के साथ अभिव्यक्त हुई हैं– "महाभोज आज के राजनैतिक जीवन में आई हुई मूल्यहीनता तिकड़मबाजी, शैतानियत और सड़ाध का चित्रण करने वाला पहला साहसपूर्ण उपन्यास है। आज भ्रष्टाचार शिष्टाचार बन गया है गरीबों के लिए झूठे आँसू बहाने में निपुण मगरमच्छनुमा नेताओं द्वारा लगाये गये खोखले

नारों के पीछे कुत्सित षड़यन्त्रों ओर दम घोटू स्थितियों की निर्भीक चीर–फाड़ इसमें हुई है।"[6]

समाज में वस्तुतः दो वर्ग हमेशा से विद्यमान रहे हैं एक शोषक और दूसरा शोषित, शोषक वर्ग समाज के सभी संसाधनों पर अपना अधिकार जमा लेता है ओर मनमाने ढंग से कमजोर तबके का शोषण करता है। इसी दृष्टि से समाज की समस्याओं को निपटाने के लिए मन्नू–भण्डारी पूरी तरह सजग हैं और अपनी पैनी व व्यंग्यात्मक दृष्टि से लेखिका ने राजनीतिज्ञों के प्रति सहानुभूति की अभिव्यक्ति की है। बिस्सू की मौत पर अखबार पढ़ने वालों के बारे में लेखिका कहती हैं –"किसी ने खुमारी में अंगड़ाई लेते हुए तो किसी ने चाय की चुस्की के साथ पढ़ा व देखा, देखते ही चेहरे पर विषाद की गहरी छाया पुत गई, चाय का घूँट भी कडुवा हो गया।"[7] लेखिका ने बड़ी तीक्ष्ण दृष्टि से पूरे समाज को देखा और उन लोगों को भी जो गरीबों के हित की बात करते हैं किन्तु वास्तविक शोषक वे ही होते हैं, दा साहब का एक कथन इस प्रकार से है– "दुहाई सब गरीबों को देते हैं पर उनके हित की बात कोई नहीं सोचता, जनता को बाँटकर रखो........... कभी जात की दीवार खींचकर तो कभी वर्ग की दीवारें खींचकर। जनता का बँटा बिखरापन ही तो स्वार्थी राजनेताओं की शक्ति का स्रोत है।"[8]

दलित चेतना समाज में जब अपने अधिकार, अपनी मुक्ति और अपने शोषण की बात सोचती है तभी शासकों में हड़कम्प मचने लगता है, दा साहब की सभा में बिन्दा दहाड़ता हुआ आजादी के तीस सालों तक शोषण के न रूकने की शिकायत करता है तब दा साहब भीतर ही भीतर उसे मिटा देने की ठान लेते हैं। बिन्दा के स्वर में लेखिका की सामाजिक चेतना मुखरित हुई है– "तीस साल से आप लोगों की बातें ही तो सुनते आ रहें हैं, क्या हुआ आज तक ? पेट भरने के लिए अन्न नहीं, आपकी बातें......खाली........बातें। जैसे राहुल बाबू तैसे आप।"[9] 'महाभोज' की रचना का उद्देश्य गांव के उस बाह्य परिवेश का चित्रण करना भी है जिसे युगीन राजनीति विकृत करती जा रही है। परम्परित अर्थ में किसी त्रासदी की सृष्टि करना कथा लेखिका का मन्तव्य अथवा लक्ष्य नहीं है, लेखिका के संवेदनशील मन को सरोहा गाँव में एक हरिजन की हत्या के प्रसंग ने अवश्य ही झकझोरा है। लेखिका मन्नू भण्डारी का 'आपका बंटी' नामक उपन्यास एक समस्यापरक उपन्यास है। इस उपन्यास की प्रमुख समस्या अकेलेपन से मुक्ति पाने के लिए व्यक्ति द्वारा किए गये प्रयत्नों की प्रश्नवाचकता है। 'आपका बंटी' की मुख्य समस्या विभिन्न स्तरों पर अकेलेपन से निस्तार पाने और जीवन क साथ सामंजस्य स्थापित करने की अकुलाहट ही है। आज के मनुष्य का आन्तरिक संकट इस उपन्यास में बड़ी सफलता से उभरा है– "आज के जीवन में व्याप्त रिक्तता, उदासी और परिस्थितिजन्य विवशता के कारण भीतर ही भीतर टूटते चले जाने की नीयति व्यापक सामाजिक संदर्भों में अभिव्यक्त हुई है।"[10] 'आपका बंटी' नामक उपन्यास अपनी मूल संवेदना को व्यक्ति के स्तर पर उठाकर सम्पूर्ण समाज के व्यापक फलक पर स्थापित करता है। इस उपन्यास के सभी पात्रों में एक तरह का खालीपन है। साहित्य और इतिहास गवाह है कि त्याग, मर्यादा, गरिमा और ममत्व की आड़ में स्त्री का शोषण निरन्तर होता रहा। धार्मिक नियमों और सामाजिक मान्यताओं में जकड़ी स्त्री स्वतन्त्र व्यक्तित्व की कल्पना भी नहीं कर सकती थी। व्यक्ति और समाज परस्पर एक दूसरे के लिए हैं, लेकिन व्यक्ति से समाज है अतः व्यक्ति मात्र समाज के अनुसार चले तो वह समाज का माध्यम होगा, समाज की हर इकाई सुसंस्कृत और प्रगतिचेता नहीं है, जबकि शकुन और मंजरी जैसी नारियाँ सामान्य नहीं हैं, उनकी अपनी जीवन दृष्टि है। माँ होने के नाते उनमें दायित्व भाव भी है, सामाजिक मर्यादा और कर्तव्य को निभाते हुए वह स्त्रियाँ परिवर्तित जीवन मूल्यों के साथ ही रही हैं।

मन्नू भण्डारी का 'स्वामी' नामक उपन्यास शरतचन्द्र के जीवन पर आधारित एक अनूठा उपन्यास व भारतीय साहित्य में एक अपूर्व कथा प्रयोग है। मन की गहराई में उतर जाने वाली एक त्रिकोण प्रेम कथा है अर्थात् 'स्वामी' एक प्रेम कथा है किन्तु प्रेम भी सामाजिकता के दायरे से बाहर नहीं होता, नारी मन का अन्तर्विरोध प्रेमी और पति के बीच चयनक्रम में विचारों का घातप्रतिघात तथा अन्त में आस्था, प्रेम, कर्तव्य और शाश्वत मूल्यों का वरण लेखिका की स्वस्थ

सामाजिक चेतना को व्यक्त करते हैं। 'स्वामी' उपन्यास का पात्र नरेन समाज के उस रूप का प्रतीक है जो पाने की लालसा में कर्तव्य का ध्यान खो बैठता है – "प्रेमी और स्वामी के दो ध्रुवों के बीच झूलता हुआ मिन्नी का जीवन समाज के समक्ष कई प्रश्न खड़ा करता है जैसे–नारी की अपनी सामाजिक स्थिति क्या है ?"[11]

जीवन के प्रति लेखिका के अपने अलग मानदण्ड हैं। जिन्दगी में अपने तमाम निजी अधिकार व कर्तव्यों की टकराहट से उत्पन्न वैषम्य को नष्ट करने के लिए सामन्जस्य को अधिक महत्व देती है। अपने जीवन के संदर्भ में भी मन्नू भण्डारी की यही मान्यता रही– "जिन्दगी को अपनी शर्तों पर या अपने मनचाहे ढंग से शायद ही किसी को मिलती हो, जो नहीं मिला उसी की कचोट से हम जीवनभर टूटते निखरते रह जाते हैं या जो कुछ भी मिला उसी का भरपूर निचोड़ वसूल कर सार्थकता या उपलब्धि का संतोष भी पा सकते हैं।"[12] नारी हमारे जीवन की मुख्य घटक है, उसके स्वतन्त्र व्यक्तित्व को स्वीकार कर ही समाज उन्नति कर सकता है, किन्तु वैयक्तिक स्वतन्त्रता और अहं के कारण सामंजस्य असम्भव है। स्त्री–पुरूष दोनों जब प्यार करते हैं तो एक स्वर्गीय वातावरण का निर्माण करते हैं, किन्तु यही परिवार जब विघटित होने लगता है तो वह अभिशप्त होकर नरकीय यातना के दौर से गुजरने लगता है। व्यक्तिमन की टूटन को सामाजिक समस्या का रूप लेखिका ने दिया है, इसके साथ ही संतान की दयनीय दशा का यर्थाथ चित्रण भी उन्होंने खींचा है। माँ–बाप के आपसी संघर्ष में संतान का कोई दोष नहीं होता, फिर भी सबसे अधिक पीड़ा का भाजन वही बनती है।

संदर्भ

1. मन्नूभण्डारी –आपका बंटी , पृ033
2. " – आपका बंटी पृ044
3. " – महाभोज, पृ05
4. " – महाभोज, पृ06
5. " – महाभोज, पृ031
6. महाभोज : सृगन और समीक्षा –डॉ0 जगन्नाथ राय चौधरी, पृ05
7. मन्नूभण्डारी –महाभोज, पृ08
8. " – " पृ0 110
9. " – महाभोज, पृष्ठ 68
10. डॉ0 सुरेश सिन्हा – हिन्दी उपन्यास : संस्करण, 1972 पृ0 374
11. मन्नू भण्डारी – स्वामी, पृ0 110
12. सारिवार –अगस्त अंक, पृ0 14, (वर्ष 1978)